गुप्तकालीन अर्थव्यवस्था की समीक्षा : एक नवीन दृष्टिकोण

विजय कुमार
शोध छात्र
प्राचीन इतिहास पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

गुप्तकाल भारतीय इतिहास का वह काल है, जहाँ वर्तमान में हिन्दू धर्म की सभी प्रचलित मान्यताओं का प्रादुर्भाव हुआ तथा इससे वर्तमान स्वरूप धारण किया। प्रारम्भ से चली आ रही प्रकृतिवादी वैदिक मान्यताओं के स्थान पर स्मृतियों तथा पुराणों, सामाजिक संस्थाओं एवं नियमों ने अपना प्रभाव स्थापित करना प्रारम्भ कर दिया था। साथ ही साथ वैदिक तथा अवैदिक मान्यताओं का टकराव भी शिथिल होने लगा था, गुप्तकाल भारतीय इतिहास का वह काल है, जिसमें राजव्यवस्था, धर्म, समाज, कला साहित्य, अर्थव्यवस्था सभी क्षेत्र एक व्यवस्थित और स्थिर स्वरूप धारण करते हुए दिखायी पड़ते हैं। राष्ट्रवादी इतिहासकार गुप्तकाल को भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग कहते है। वही मार्क्सवादी विचारधारा वाले इतिहासकारों का कहना है कि गुप्तकाल श्रेष्ठ युग का प्रतिनिधित्व नहीं करता, बल्कि गुप्तकाल की आर्थिक स्थिति कुषाण काल की अपेक्षा निम्नतर स्थिति में थी।

गुप्तकाल में यद्यपि विदेशी व्यापार में गिरावट हुई फिर भी मध्य भाग दक्कम तथा दक्षिण भारत के दुर्गम तथा ऊपर–परती क्षेत्रों में ब्राह्मणों को दिये गये भूमि अनुदानों के फलस्वरूप इस युग में आर्थिक प्रवृत्तियों का अभूतपूर्व विस्तार हुआ। गुप्तकाल की आर्थिक समृद्धि का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है के प्राचीन भारत में किसी ने भी इतनी स्वर्ण मुद्रायें नहीं चलायी जितनी की गुप्तों ने। स्वर्ण मुद्राओं के अतिशय प्रचलन से व्यापारियों और सम्पन्न कारीगरों की आर्थिक स्थिति में बढ़ोत्तरी हुई।

आर्थिक दृष्टि से गुप्तकाल की भव्यता इसलिए है कि गुप्त राजाओं ने प्रचुर मात्रा में स्वर्ण मुद्राएं जारी की। स्वर्ण मुद्राओं का व्यवहार जमीन की खरीद–बिक्री में होता था, और संभव है, राजस्व की वसूली और उच्चाधिकारियों के वेतन की अदायगी भी स्वर्ण मुद्राओं में ही की जाती रही हो। किन्तु तांबे के सिक्कों के अभाव से यह संकेत मिलता है कि छोटे–छोटे अधिकारी अधिक संख्या में नहीं रखे जाते थे। गुप्त राजाओं को कई भौतिक सुविधाएं प्राप्त थीं। उनके शासन क्षेत्र का सम्बन्ध मध्य देश की उर्वर भूमि था, जिसमें बिहार और उत्तर प्रदेश आते थे। वे मध्य भारत और वर्तमान में झारखण्ड के लौह अयस्क का उपभोग कर सकें। इसके अलावा पूर्वी रोमन साम्राज्य के साथ रेशम का व्यापार करने वाले उत्तर भारत के इलाके उनके पड़ोस में पड़ते थे, अतः वे इस निकटता का भी लाभ उठा सकें। इन अनुकूल

स्थितियों के बल पर गुप्त शासकों ने अपना अधिपत्य मध्य गंगा का मैदान प्रयाग, साकेत और मगध पर स्थापित किया। गुप्तकाल की आर्थिक समृद्धि के बारे में तत्समय भारत की यात्रा करने वाले चीनी यात्री फाह्यान के यात्रा वृत्तान्त से भी मिलती है। गुप्तकाल में कृषि एवं शिल्पों में काफी उन्नति हो चुकी थी, जैसा कि पुराणों के विवरण से भी पता चलता हे कि इस समय तक शूद्रों को भी कृषि कार्य करने का अधिकार प्राप्त हो चुका था, मुद्रा प्रणाली की विशिष्टता एवं प्रचुर प्रसार से भी इसकी पुष्टि होती है, परन्तु इसका दूसरा पक्ष यह भी है कि भूमिदानों की बढ़ती अधिकता से स्वतंत्र कृषक भी भूमिदास बनते जा रहे थे।

स्वर्णमुद्राओं का अत्यधिक विकास तथा विदेशी व्यापार जहां गुप्तकाल की श्रेष्ठ आर्थिक स्थिति के द्योतक है तो वहीं परवर्ती काल में हूण आक्रमण के कारण विभिन्न विदेशी व आन्तरिक व्यापारिक मार्ग तथा मुद्राओं में ह्रास आर्थिक स्थिति में पतन को प्रदर्शित करते है। एक तरफ बड़े व्यापारिक केन्द्र नष्ट हो गये तो दूसरी तरफ नये–नये आर्थिक केन्द्रों का उदय हुआ, गुप्त राज्य को विशाल वेतनभोगी सेना के रख रखाव में कठिनाई होने लगी होगी, क्योंकि धार्मिक या अन्य उद्देश्यो से ग्रामदान करने की परम्परा बहुत अधिक हो गयी थी, विदेशी व्यापार के ह्रास से भी उसकी आय कम हुई होगी। मन्दसौर लेख से पता चलता है कि रेशम बुनकरों की एक श्रेणी गुजरात से मालवा चली गई और वहाँ पर अन्य पेशे को अपना लिया। इस प्रवजन का मुख्य कारण यही प्रतीत होता है कि इस समय पश्चिमी देशों के साथ व्यापार लाभकारी नहीं रह गया था।

पाँचवी सदी के मध्य के बाद गुप्त राजाओं ने अपनी स्वर्ण मुद्राओं में शुद्ध सोन का अनुपात घटाकर किसी तरह चलाने का प्रयास किया फिर भी इसका कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। अतः यह कहा जा सकता है कि गुप्त काल की आर्थिक अवस्था बहुत उन्नत नहीं मानी जा सकती, लेकिन फिर भी आत्मनिर्भर ग्रामों के उदय ने उद्योग एवं व्यापार वाणिज्य को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया। इसी के कारण सिक्कों का प्रचलन कम मिलता है। फाह्यान कौड़ियों के प्रचलन का उल्लेख करता है। किन्तु व्यापारिक नगरों के रूप में पाटलिपुत्र, मथुरा, तक्षशिला आदि के ह्रास के लक्षण भी दिखाई देते हैं।

गुप्तकाल की शासन पद्धति में अनेक परिवर्तन हुए लेकिन सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन अनुदान भोगियों को दी गई राजास्विक तथा प्रशासनिक छूटों और सामंत कहे जाने वाले विजित राजाओं के साथ स्थापित किये गए सम्बन्धों के सन्दर्भ में हुए। गुप्त शासन प्रणाली में हमें सामंतवाद की स्पष्ट विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती है। गुप्त शासन प्रणाली ने परवर्ती काल के उस प्रशासनिक ढांचे की नींव तैयार कर दी जो पूर्णतः सामंतवादी था। गुप्तकाल की अग्रहार–दान प्रथा में सामन्त वर्ग को बढ़ावा दिया। इस कोटि के दान से सम्बन्धित ताम्रलेख सबसे अधिक संख्या में सर्वप्रथम गुप्तों को ही

प्राप्त हुए है। गुप्तों के समस्त दान पत्रों में महाभारत के श्लोक उद्धृत किये गये हैं, जिसमें अग्रहार दान का महत्व वर्णित है। दानग्राही को दान की भूमि में समस्त राजकीय अधिकार उपलब्ध हो जाते थे। स्थानीय निवासी समस्त निश्चित कर अब राज्य के स्थान पर दानग्राही को दान देने लगे थे। इस प्रकार की सुविधा एवं छूट प्रदान करना दोषपूर्ण था।

इस प्रकार गुप्तकालीन आर्थिक स्थिति तथा व्यापार–वाणिज्य और मुद्रा व्यवस्था के संक्षिप्त विवरण के उपरान्त हम कह सकते हैं कि यद्यपि यह युग धनिकों, बड़े व्यवसायियों, सामन्तों, बड़े–बड़े राजा महाराजाओं के लिए स्वर्ण युग के समान था, परन्तु जहाँ तक साधारण जनता का सवाल था, वे इस काल में नए–नए शोषण चक्रों के अन्दर दबते गए। विशेषकर सामंतवाद का प्रभाव बढ़ जाने के कारण बेगार और अर्द्धवास की अवस्था का सामना करना पड़ा। गुप्तकालीन बदलती राजनीतिक स्थिति ने साम्राज्य की अर्थव्यवस्था को गहरे रूप से प्रभावित किया, समुद्रगुप्त के विजय अभियानों ने एक तरफ जहां राजनीतिक एकता का सूत्रपात किया वहीं उसकी साम्राज्यवादी नीतियों ने अन्ततः राजनीतिक एकता को नष्ट करने वाली सामन्तवाद की अवधारणा को प्रभावित ही नहीं किया बल्कि उसे और तीव्र कर दिया। इस प्रक्रिया ने गुप्तकालीन अर्थव्यवस्था को भी सामंतवादी प्रवृत्तियों के अनुसार बदल दिया। इसी तरह विदेशी आक्रमणों के फलस्वरूप वाह्य सीमा की सुरक्षा की चिन्ताओं ने विदेशी व्यापार को नकारात्मक रूप में प्रभावित करते हुए उसे आंतरिक स्वरूप में बदल दिया।

इस समय राज्य आर्थिक मामलों में कोई विशेष दखल नहीं देता था। मौर्यकाल के विपरीत हम इस काल में कारीगरों, व्यापारियों और महन्तरों को ग्रामीण तथा शहरी प्रशासन में सहयोग करते हुए देखते हैं। गांवों में बहुत अधिक सत्ता प्राप्त कर ली थी, जिससे केन्द्र का काम बहुत कम हो गया था। इसलिए गुप्तों को मौर्य जितनी बड़ी नौकरशाही की न तो आवश्यकता थी और न ही ऐसी नौकरशाही खड़ी की। गुप्त राजाओं ने प्रबल सैन्य शक्ति के बावजूद गुप्तकाल में जो संस्थागत तथा विकेन्द्रीकरण की दिशा में कार्य कर रहे थे वे इस तरह के प्रागुप्तकालीन तत्वों से कहीं अधिक प्रबल थे।

जहाँ तक गुप्त युग में व्यापार वाणिज्य के ह्रास का प्रश्न है तो इस सम्बन्ध में एक अन्य विचारणीय बात यह है कि रोम के साथ स्थल मार्ग से व्यापार भी होता था तथा यह चौथी शती में इतना अधिक विकसित हुआ कि 'सिल्क' जो आर्लियन के काल में सोने से तौल कर बिकता थां वह जूलियन के काल में इतना सस्ता हो गया कि सामान्य मनुष्य भी उसे खरीद सकता था। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि गुप्त काल में भारत का रोम के साथ व्यापारिक सम्बन्ध पतनोन्मुख रहा हो। रोम के पतन के बाद उसका स्थान बैजोन्टियम ने ग्रहण किया तथा कान्स्टैन्टाइन ने उसे अपने

शासन का केन्द्र बनाया, इस समय से भारत तथा रोम का व्यापारिक सम्बन्ध और घनिष्ठ हो गया। भारत के विभिन्न भागों से प्राप्त बैजेन्टियन सिक्कों से भी दोनों देशों के बीच घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्धों की सूचना मिलती है। अतः हमारे पास यह सिद्ध करने के लिए कोई भी प्रमाण नहीं है कि गुप्त युग में व्यापार–वाणिज्य का ह्रास हुआ।

सन्दर्भ सूची–

1. वाजपेयी, के0डी0, इण्डियन न्यूमिसमेटिक स्टडीज, अभिनव पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली, (2004)
2. मजूमदार, आर0सी0, श्रेण्य युग, भारतीय विद्याभवन बाम्बे, (1970)
3. आर0के0 मुखर्जी, गुप्त एम्पायर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली (1948), पृष्ठ संख्या 48
4. रोमिला थापर, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पटना, (1993) पृ0 132–133
5. विद्यालंकार, सत्यकेतु, प्राचीन भारत, श्री सरस्वती सदन नई दिल्ली (2015), पृ0 407
6. शर्मा, रामशरण, प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार व संस्थाएं, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पटना, इलाहाबाद, कोलकाता (2014) पृ0 303, 319 व 327
7. शर्मा, रामशरण, भारतीय सामंतवाद, मेकमिलन प्रकाशन, दिल्ली (1993)
8. अल्तेकर, ए0एस0, प्राचीन भारतीय शासन–पद्धति, मोती लाल बनारसीदास, वाराणसी (2003) पृ0 268
9. आयंगर, के0वी0 आर0, कन्सीडरेशंस आन सम अस्पेक्ट्स ऑफ ऐन्शियन्ट इण्डियन पॉलिटी, मद्रास (1916), पृ0 105
10. गोपाल, लल्लन जी, इकोनामिक्स लाइफ ऑफ नार्दन इण्डिया, मोती लाल, बनारसीदास, वाराणसी (700–1200 ई0)
11. जायसवाल, के0पी0, हिन्दू पॉलिटी, चौखम्बा इण्डोवेस्टर्न प्रकाशन, वाराणसी, (1963)
12. झा एवं श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली (1984), पृ0 300
13. झा, डी0एन0, रिवेन्यू सिस्टम इन पोस्ट मौर्या एण्ड गुप्ता टाइम्स, कलकत्ता, 1967
14. बाशम, ए0एल0, अद्भूत भारत, सिडविक एण्ड जैक्सन यू0के0 (1954)
15. मैती, एस0के0, इकोनामिक लाइफ ऑफ नार्दन इण्डिया इन द गुप्ता पीरियड, पृ0 135–38